संपादकीय

शिक्षा का क्षेत्र इतना व्यापक है कि जीवन का प्रत्येक पहलू कहीं-न-कहीं इससे जुड़ता हुआ प्रतीत होता है। यही कारण है कि बड़े-बड़े विद्वान और चिंतक भी अपने विचारों और कार्यों में शिक्षा और शैक्षिक संस्थानों को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। हमारा यह अंक इस बार एक साथ ही चार महान विद्वानों और चिंतकों—महात्मा गांधी, कविगुरु रवींद्रनाथ टैगोर, विनोबा भावे और डॉ. राधाकृष्णन के शैक्षिक विचारों को आपके सामने रख रहा है। ये चारों लेख पाठकों को अवसर प्रदान करेंगे— विविध संदर्भों में शैक्षिक विचारों की समानता और अंतर का विश्लेषण करने का। अंक की शुरुआत 'हिमालय है तो हम हैं' लेख से की गई है। यह लेख एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा आयोजित रवीन्द्रनाथ टैगोर के चौथे स्मृति व्याख्यान के अवसर पर शेखर पाठक द्वारा दिये गये भाषण का लिखित रूप है। इस व्याख्यान के माध्यम से शेखर पाठक ने यह समझाने का प्रयास किया है कि हिमालय हमारे अस्तित्व को बनाये रखने के लिए कितना अहम् है। आज इस पर्वतमाला का तेजी से ह्रास हो रहा है, जिस पर चिंतन करना बहुत ज़रूरी है।

विद्वानों और चिंतकों के विचारों को शिक्षा में ढालने की सबसे महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारी शिक्षक की होती है। शिक्षक कड़ी है चिंतकों और विद्यार्थियों के बीच संवाद स्थापित करने की। शायद यही कारण है कि शिक्षक और शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों से हमारी बहुत सारी अपेक्षाएँ हैं। इस अंक में शामिल शिक्षक, शिक्षण और शिक्षक-शिक्षा से संबंधित लेख— 'सार्वभौमिक शिक्षक— क्यों, कौन, कैसे?', 'वर्तमान में शिक्षण के बदलते आयाम— चुनौतियाँ एवं संभावनाएं', 'स्कूली शिक्षा के वर्तमान परिदृश्य में सामुदायिक गान की सार्थकता' इन अपेक्षाओं की ओर न केवल इशारा करते हैं बल्कि इन्हें पूरा करने का रास्ता भी दिखाते हैं। वर्तमान में स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन पर बहुत चर्चाएं और बहसें हो रही हैं। विभिन्न राज्यों के शिक्षा बोर्ड तथा अन्य शैक्षिक संस्थाएं अलग-अलग तरीके से मूल्यांकन के तरीकों को बदलने का अच्छा प्रयास कर रही हैं। परंतु अभी तक इस ओर एक सार्थक बदलाव दृष्टिगत नहीं हो पा रहा है। इस अंक में इसी विषय पर विश्लेषणात्मक रोशनी डालता एक लेख

'सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन–चुनौतियाँ और संभावनायें' शामिल है। शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर जब चर्चा होती है तो कई मंचों से एक और स्वर मुखरित होता है जिसमें मूल्य-शिक्षा या मूल्यों की बात की जाती है। हालांकि इस पर नज़रिये अलग-अलग हैं, परंतु एक बात पर तो सभी सहमत हैं कि हमारी स्कूली शिक्षा में मानवीय तथा सांवैधानिक मूल्यों को उपयुक्त स्थान दिया जाना चाहिए। इस अंक में शामिल एक शोध-अध्ययन 'कक्षा नवमीं स्तर पर मूल्य विवेचना प्रतिमान की प्रभाविकता का सामाजिक मूल्य एवं प्रतिक्रियाओं के संदर्भ में अध्ययन' विद्यार्थियों में सामाजिक मूल्यों के विकास के संदर्भ में कुछ प्राप्तियों को सामने रखता है। स्कूली शिक्षा का अगर बारीकी से अवलोकन और गहन अध्ययन किया जाए तो कई बार इसके दो रूप सामने आते हैं। एक बार को तो लगता है कि शिक्षा के अधिकार का कानून बना दिया गया है। 'स्कूल चलें हम' का सपना साकार होने जा रहा है। हर बच्चा स्कूल में दिखाई देगा, बाल श्रम की समस्या कम हो जाएगी इत्यादि-इत्यादि सकारात्मक सपने दिखाई देते हैं, परंतु जब हममें से कुछ लोगों के सामने वास्तविकता अनुभव के रूप में सामने आ जाती है तो 'प्रवसन की पीड़ा और शिक्षा' जैसे लेखों को लिखा जाता है। इस अंक में शामिल यह लेख एक शिक्षक के व्यक्तिगत अनुभव को दर्शाता है, जिसे उसने शिक्षा के अधिकार के साथ संबंधित कर पाठकों के सामने रखने का प्रयत्न किया है। आशा है हमारे लेखकों के योगदान से निर्मित यह अंक आपको पसंद आएगा।

अकादमिक संपादकीय समिति